PUNE RESEARCH WORLD ISSN 2455-359X
AN INTERNATIONAL JOURNAL OF INTERDISCIPLINARY STUDIES Vol 1, Issue 2

घुमंतू जनजातियों की शैक्षिक समस्याएँ

(मराठी से हिंदी में अनूदित घुमंतू जनजाति के स्वकथनों के संदर्भ में)

दत्तात्रय रामचंद्र भोसले,
शोधछात्र,
हिंदी विभाग,
सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे
महाराष्ट्र भारत

प्रो. डॉ. वी. एन. भालेराव,
शोधनिर्देशक एवं अध्यक्ष,
हिंदी विभाग,
सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे
महाराष्ट्र भारत

भारतीय विषम समाज व्यवस्था के कारण भारत का बहुसंख्य समाज सदियों से उपेक्षित रहा है। वर्ण व्यवस्था के कारण उच्च वर्ण लोगों ने हमेशा निम्न लोगों का शोषण किया है। इनका सामाजिक, शैक्षिक, आर्थिक, राजनीतिक आदि स्तरों पर शोषण होता रहा है। इन्हें शुद्र एवं तिरस्कृत माना गया है। इनका परंपरा से दलन, दमन हुआ इसलिए इन्हें 'दलित' कहा जाता है। भारत की अस्पृश्य, आदिवासी तथा घुमंतू जाति-जनजातियाँ शूद्र तथा अतिशूद्र मानी गई है। इन्हें शिक्षा, धन-संपत्ति, सत्ता, अधिकार आदि से वंचित रखा गया। इसके साथ ही घुमंतू जनजातियों को स्थिर समाज व्यवस्था में स्थान न मिल पाने के कारण इन्हें जमीन, घर तथा स्थिर व्यवसाय से वंचित रहना पड़ा। प्रस्थापित समाज व्यवस्था ने इन्हें प्रताड़ित तथा अपमानित किया और ज्ञान, अर्थ, सत्ता आदि से दूर रखा।

महात्मा जोतिबा फुले, राजश्री शाहू महाराज, डॉ. बाबासाहब आंबेडकर के विचारों के कारण इन दलित एवं उपेक्षित समाज वर्ग को वाणी मिली है। घुमंतू जनजातियों के कुछ सुशिक्षित युवकों ने स्वकथनों के माध्यम से समाज जीवन के चित्रण के साथ उनकी व्यथा, वेदना को अभिव्यक्ति दी है। इन स्वकथनों में व्यक्ति के माध्यम से उपेक्षित एवं अभावग्रस्त समाज जीवन की अभिव्यक्ति हुई है। इसमें घुमंतू जनजातियों की सामाजिक, शैक्षिक, आर्थिक, आदि समस्याएँ उभरकर आई है।

शैक्षिक समस्याएँ :-

शिक्षा से मनुष्य की सोच में परिवर्तन एवं विकास होता है। मानव सभ्यता के विकास में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। दलित जाति एवं जनजातियों को मनुवादी संस्कृति में शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार नहीं था। घुमंतू जनजातियाँ भारतीय परंपरागत समाज व्यवस्था के बंधन और घुमंतू जीवनायापन के कारणों से शिक्षा प्राप्ति से वंचित रह गई है। स्वतंत्र भारत में भी घुमंतू जनजातियों की शैक्षिक प्रगति नहीं हो पाई है। घुमंतू जनजातियों के स्वकथनों में घुमंतू की शैक्षिक समस्या चित्रित हुई है।

शिक्षा से वंचित :-

'उठाईगीर' जनजाति के लोग आर्थिक विपन्नता के कारण स्कूली शिक्षा नहीं ले पाते। इस जनजाति के कवठा गाँव में स्थित सारे लोग अशिक्षित थे और उदरनिर्वाह हेतु उठाईगीरी करते हुए घुमते थे। लेखक आर्थिक विपन्नता के बावजूद स्कूल जाते हैं। परंतु घर में खाने के लिए कुछ भी नहीं था। इन्हें दो-दो, तीन-तीन दिन भूखा रहना पड़ता है। भूख की हालत के कारण स्कूल नहीं जा पाते। 'पराया' स्वकथन के लेखक जब आठ-दस साल के थे तब स्कूल में नाम दाखिल किया था। उनके उम्र के बच्चे तीसरी-चौथी कक्षा में थे। इनका स्कूल में नाम दाखिल करते समय ना ही जन्मतिथि ज्ञात थी और ना ही जन्म स्थान। पिताजी अशिक्षित होने के कारण ये सब संभाल रख नहीं पाये थे। इनके बापदादाओं को काला अक्षर भैस बराबर था। वे चिठ्ठी आने पर मास्टर के पास या गाँव के किसी शिक्षित व्यक्ति के पास जाते थे। लेखक के पिताजी चिठ्ठी आने पर रावसाहब धनी के घर जाते हैं। धनी उससे गठ्ठाभर घास कटवाता हैं, फिर चिठ्ठी पढ़ता है। इस संदर्भ में लेखक स्वकथन 'पराया' में लिखते हैं कि ''हमारे बाप की किसी पीढ़ी ने स्कूल की शक्ल नहीं देखी थी। हमें एक ही पाटी (बाँस के फांके की) मालूम थी।''[1] इनकी परंपरागत मानसिकता, घुमंतू जीवनयापन, आर्थिक विपन्नावस्था के कारण 'कैकाडी' जनजाति के बच्चे स्कूली शिक्षा से वंचित रह जाते हैं।

'डुग्गी जोशी' जनजाति परंपरा से शिक्षा से वंचित रही है। यह जनजाति उदरनिर्वाह हेतु भीख माँगने के लिए गाँव-गाँव भटकती रही है। इनके बच्चे स्कूल जा नहीं पाते। लेखक के पिताजी लेखक को पढ़ाना चाहते थे। इसलिए वे लेखक को स्कूल भेजते हैं। परंतु मास्टरजी स्कूल में प्रवेश नहीं देते हैं। लेखक को मास्टरजी नम्रता से समझाते हैं कि ''तू भिखारी का बेटा....तेरा नाम कैसे दाखिल करें स्कूल में....जा..तेरे बाप को बोल....तुझे स्कूल में प्रवेश नहीं दिया जा सकता। जा...भाग....।''[2] इस प्रकार भिखारी के लड़कों को स्कूल में प्रवेश नहीं मिल पाता था। ये लोग गाँव-गाँव भटकते थे। किसी एक गाँव में रहकर इनके बच्चों को संभालनेवाला कोई नहीं था। इसलिए इनके बच्चे शिक्षा से वंचित रहते थे।

'बेरडों' का धनट्टी गाँव पहाड़ों और झाड़ियों से घिरा हुआ था। इस गाँव में पाठशाला तो बनाई गई थी परंतु जंगल एवं पहाड़ी इलाके की असुविधा के कारण मास्टर पढ़ाने के लिए नहीं आते थे। सरकारी व्यवस्था इनकी ओर ध्यान नहीं देती थी। 'बेरड' लोग पहाड़ी एवं जगलों में रहने के कारण बेरडों के बच्चे स्कूली शिक्षा से वंचित रहते थे। 'नाथपंथी डवरी गोसावी' जनजाति के लोग भीख माँगने गाँव-गाँव भटकते हैं। इसलिए आज भी इनके बच्चे स्कूली शिक्षा से वंचित रहते हैं। इस प्रकार घुमंतू जनजाति के बच्चे भारतीय परंपरागत विषय समाजव्यवस्था, घुमंतू जीवनयापन, अज्ञानता, असुविधा, अभावग्रस्तता आदि कारणों से शिक्षा प्राप्ति से वंचित रह जाते हैं।

शिक्षा के प्रति अज्ञान एवं अनास्था :-

घुमंतू जनजाति में शिक्षा के प्रति अज्ञान एवं अनास्था पाई जाती है। 'उठाईगीर' स्वकथन के लेखक स्कूल जाने लगते हैं और चार दिन बाद बिरादरी के कई बच्चों को टट्टी और उलटियाँ शुरू होती है। इन जनजाति के लोगों का मानना है कि लेखक को स्कूल में भरती करने के कारण इनके बच्चों को हैज्जी की बीमारी हुई है। इस जनजाति के तुलसीराम और पांडूरंग लेखक के पिताजी को समझाते हैं कि ''अरे मार्तंड, अपनी जाति में आज तक कोई पढ़ लिख सका है क्या? अपने बच्चे अगर स्कूल जाने लगे तो हम सभी का वंश डूब जाएगा। यल्लामा देवी का प्रकोप हो जाएगा।''[3] इन लोगों का अज्ञान है कि शिक्षा प्राप्त करना सिर्फ उच्च वर्ग के लोगो का काम है, हम शिक्षा

प्राप्त नहीं कर सकते। हमें हमारा परंपरागत काम करना चाहिए। पढ़ाई करके हमें कोई लाभ होनेवाला नहीं है। हम मास्टर नहीं बन सकते।

'पराया' के लेखक पहली बार स्कूल जाने लगते हैं। 'कैकाडी' जनजाति के लोग शिक्षा प्राप्त करना अच्छी बात नहीं, इसे आफत मानते हैं। वे लेखक के पिताजी को कहते हैं कि ''बाप्या तेरा बेटा पढ़ रहा है यह कोई बहुत अच्छी बात नहीं है। उसके ये फालतू लाड़ बंद होने चाहिए। अपने लोगों में यह अच्छा नहीं है। आफत बढ़ गई तो अनहोनी हो जाएगी।''[4] इन लोगों की परंपरा शिक्षा न लेनी की रही है। इस कारण इन्हें शिक्षा का भविष्य में क्या महत्व है, इससे वे अनभिज्ञ है।

'कोल्हाटी' जनजाति के कोंडिबा अपनी-बेटी शांता की पढ़ाई बीच में छुड़वाकर नाच-गाने के लिए मजबूर कर देते हैं। लड़कियों को नाच-गाना सिखाते हैं और लड़कों को साज बजाना सिखाते हैं। परंतु स्कूली शिक्षा देकर उनका भविष्य बनाने के लिए प्रयास नहीं करते हैं।

'डुग्गी जोशी' जनजाति में शिक्षा के प्रति अज्ञानता पाई जाती है। 'डेराड़गर' में नागू दादा लेखक के पिताजी को कहते हैं कि बच्चे को भीख माँगने के लिए सिखाना चाहिए। हमारे नसीब में स्कूल नहीं होता है। शिक्षा लेकर कोई फायदा नहीं है। स्कूल शुरू होने पर पिताजी लेखक को गाँव छोड़ने निकलते हैं। इस समय उनकी बिरादरी के वामन शिंदे कहते हैं कि ''मलारी छोरे का इस्कूल...तेरा कुछ भला नहीं करता...कहीं तो एक जगह पर रख दें...बार-बार लाने का...आकर छोड़ने का...कितने में पड़ता है।''[5] इन लोगों में शैक्षिक जागृति न होने के कारणा शिक्षा के प्रति आस्था नहीं है। 'बेरड' जनजाति के लोग शिक्षा के प्रति अज्ञान एवं अनास्था के कारण अपने बच्चों को स्कूल में भेजते नहीं है। लेखक के दद्दा कहते हैं कि ''आपन को काएके वास्ते चैए शाला-वाला? अपन का छोरा लिखा-पढ़ी करके मास्टर थोडे इ बननेवाला है?''[6] इन लोगों को इसका ज्ञान नहीं है कि लिखाई-पढ़ाई के बिना अपने बच्चों का ज्ञान बढ़ नहीं सकता और उसे अच्छी नौकरी मिल सकती है। लेखक के मामा अपनी बेटी को पढ़ाना चाहते थे परंतु लेखक की माँ इसका विरोधा करती है। वह कहती है कि ''उसे काहे वास्ते भेजना है इस्कूल, उस्कूल? छोरी जात, कित्ती भी ढेर पढ़े-लिखे, फूंकेगी तो आखिर चुल्हा ही न?''[7] लेखक की माँ को इसका ज्ञान नहीं है कि लड़की भी पढ़-लिखकर उच्च पद हासिल कर सकती है।

'जीवन सरिता बह रही है' स्वकथन के लेखक का शुरू से स्कूल में मन नहीं लगता था। 'नाथपंथी डवरी गोसावी' जनजाति के लोग भीख माँगने गाँव-गाँव भटकते हैं। इसलिए ये लोग शिक्षा से अनभिज्ञ रह जाते हैं। लेखक के पिताजी को उनके जात बिरादरी के लोग कहते हैं कि ''क्यों-क्यों छोटे को स्कूल में डाला? भिखारी की जाति अपनी रोटी के टुकडे माँगकर खानेवाली। अपनी जाति कहीं स्कूल पढ़ती है? अब कहाँ स्कूल पढ़कर नौकरी मिलनेवाली?''[8]

इस प्रकार घुमंतू जनजाति के लोगों में शिक्षा के प्रति अज्ञान एवं अनास्था पाई जाती है। इनमें अधिकत्तर लोग अशिक्षित है, अंधश्रद्धाग्रस्त है। इनका शिक्षा के प्रति नकार का भाव निर्माण हुआ है। इन्हें लगता है कि शिक्षा प्राप्त करना उच्च वर्ग के लोगों का काम है, हमारा नहीं। इनमें शिक्षा के प्रति अविश्वास निर्माण हुआ है कि शिक्षा प्राप्त करके हमें कुछ भी प्राप्त नहीं होगा। हमें परंपरागत व्यवसाय करना चाहिए। स्कूली शिक्षा लेकर बच्चों का भविष्य सुधर सकता है, इसका इन्हें ज्ञान नहीं है।

स्थैर्यता का अभाव :-

घुमंतू जनजाति का जीवन अस्थिर होता है, वे लोग उदरनिर्वाह हेतु गाँव-गाँव, वन-वन भटकते रहते हैं। 'कैकाडी' जनजाति के अधिकत्तर बच्चे स्कूल जा नहीं पाते। जो कुछ बच्चे स्कूल जाने की कोशिश करते हैं, उनकी शिक्षा पड़ाव बदलने से खंडित हो जाती है। नये गाँव, नये स्कूल में मन नहीं लगता। लेखक अपने माता-पिता के साथ कोकण में घूम रहे थे। वहाँ के स्कूल में जाते थे। कोंकणी भाषा अलग थी, उनके समझ में नहीं आती थी। लेखक का नाम निरगुडी गाँव के स्कूल में दर्ज किया था। लेखक अपने माता-पिता के साथ आज यहाँ कल वहाँ घूमते-घूमते किसी तरह चौथी पास हो गए। उन्हें आगे की पढ़ाई के लिए किसी एक गाँव में रहना आवश्यक था। उनके माता-पिता की भटकने की विवशता थी।

'डेराडंगर' के लेखक को उनके पिताजी स्कूल में डालने का विचार करते हैं। उनकी बिरादरी के नागू दादा कहते हैं कि ''अरे मलारीऽऽ तू पागल-वागल हुआ कि क्या? छोरे कु इस्कूल में भेजना हो तो किसी-न-किसी गाँव में रहना होगा...इस्कूल ऐसे जंगल में तेरे तिरपाल के साथ आता है क्या?''[9] नागू दादा घुमंतू जीवन की वास्तविकता बयान करते हैं कि स्थैर्यता के अभाव में हमारे बच्चे स्कूली शिक्षा नहीं ले पाते। लेखक सलगरे गाँव के स्कूल में जाने लगते हैं। वहाँ पर स्कूल के आँगन में बैठकर कुछ अक्षर लिखने, सिखने की कोशिश कर रहे थे। लेकिन चार दिन बाद इनका डेरा दूसरे गाँव निकलता है और स्कूल की शिक्षा अभी शुरू ही हुई थी कि खंडित हो जाती है। 'डुग्गी जोशी' जनजाति के जीवन में स्थिरता न होने के कारणा इनके बच्चे स्कूली शिक्षा से वंचित रह जाते हैं।

'जीवन सरिता बह रही है' स्वकथन के लेखक के पिताजी शिक्षा से वंचित थे। वे अपने बच्चे को पढ़ाना चाहते हैं। वे अपने बच्चे का नाम स्कूल में दाखिल करने हेतु मास्टरजी से मिलते हैं। परंतु मास्टरजी कहते हैं कि ''इस बच्चे का नाम मैं स्कूल में दाखिल नहीं करूँगा, तुम्हारी डवरी की जाति, भीख माँगकर खानेवाली, कहीं भी रहनेवाली भटकनेवाली।''[10] नाथपंथी डवरी गोसावी जनजाति के बच्चे स्थैर्यता के अभाव में स्कूली शिक्षा नहीं ले पाते।

इस प्रकार घुमंतू जनजाति के जीवन में स्थैर्यता का अभाव होने के कारणा बच्चे स्कूली शिक्षा से वंचित रह जाते हैं। जो बच्चे पढ़ना चाहते हैं, उन्हें अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। वे किसी एक गाँव में रह नहीं पाते। जो बच्चे पढ़ने हेतु किसी गाँव में रहना चाहते है, वे माता-पिता की छत्र-छाया से वंचित रह जाते हैं।

शैक्षिक सुविधा एवं साधनों का अभाव :-

घुमंतू जनजाति के कुछ बच्चे स्कुली शिक्षा लेना चाहते हैं परंतु गरीबी एवं अज्ञानता के कारण उन्हें शैक्षिक सुविधा एवं साधन नहीं मिल पाते। 'उठाईगीर' स्वकथन के लेखक स्कूली शिक्षा लेने लगते हैं परंतु उनके पास शैक्षिक साधन नहीं थे। इस संदर्भ में लेखक 'उठाईगीर' स्वकथन में लिखते हैं कि ''जब मैं दूसरी कक्षा में गया तब एक बार गुरुजी ने मेरी पिटाई की। कारण किताब नहीं थी, बाबा से मांगकर मैं ऊब गया था।''[11] लेखक के पिताजी गरीबी के कारणा किताबे खरीद नहीं पाते और लेखक के पास किताब न होने कारण मास्टर पीटते हैं।

'पराया' के लेखक स्कूल में जाने लगते हैं परंतु उनके पास शैक्षिक साधन नहीं थे। इस संदर्भ में लेखक 'पराया' स्वकथन में लिखते हैं कि ''मास्टर झुंझलाता। ऊपर से मेरे पास स्लेट, पेंसिल, पुस्तक कुछ भी नहीं था। मैं सिर्फ झुंझलाता रहता, बाप कहता है, मास्टर बनेगा। कैसे मास्टर बनूंगा?''[12] लेखक के पास स्लेट, पेन्सिल, किताब आदि मूलभूत शैक्षिक साधन नहीं थे। 'डेराडंगर' के लेखक सलगरे के प्राथमिक स्कूल में पढ़ाई के लिए जा रहे थे। परंतु उनके पास तख्ती, अंकनी आदि कुछ भी नहीं था। उन्होंने छोटी पैन्ट पहनी थी, जो पुट्ठो पर फटी हुई थी।

कमीज थिगली-थिगली लगाकर बनाई थी। उनके बढ़े हुए बाल अस्त-व्यस्त थे। मास्टर स्कूल के बाहर आँगन में बिठाते थे। लेखक के बालमन को बूरा लगता था। इस संदर्भ में लेखक 'डेराडंगर' स्वकथन में लिखते हैं कि ''मेरे बालमन को समझ नहीं थी कि हमारे जैसे गरीब, बंजारा तथा निराधार जाति के लिए कोई स्कूल नहीं है। जैसे-तैसे चार शब्द सुनने को मिले। मेरे पास न तख्ती थी, न अंकनी।''[13] लेखक के पिताजी की उपजीविका मुश्किल से चलती तो शैक्षिक साधनों के लिए पैसे कहाँ से ले आते? 'बेरड' के लेखक पाँचवीं कक्षा की पढ़ाई के लिए बेलगाँव गए थे। वहाँ स्कूल के सभी बच्चे सफेद कुर्ता और खाकी रंगवाली चड्ड्याँ पहने हुए थे। परंतु लेखक अपनी गरीबी के कारण स्कूल की पोशाख नहीं ले पाते। वे हरे रंग की ढीली, लंबी, अंगिया और धारीदार कपडे की चड्ड़ी पहनकर जाते हैं। स्कूल में वे मजाक का विषय बन जाते हैं। लेखक को घरवाले स्कूल की पोशाख के लिए कपडे लेते हैं, परंतु उसकी सिलाई के लिए पैसे नहीं थे। वे सिलाई के लिए पैसे माँगते हैं तो माँ कहती है कि ''भड़ुवे, शरम नहीं आती? इत्ता दाम तो मेरे हाफ्तावार बाजार के बराबर का हुआ। तुझे अकेले को पढ़ाने के वास्ते ही इत्ते सारे पैसे लगने लगे, तो हम क्या खाएगें?''[14]

घुमंतू जनजाति के लोग अभावग्रस्त जीवन जीते हैं। उनकी गरीबी, उपेक्षा एवं लाचारी की कोई सीमा नहीं है। उन्हें अपना उदरनिर्वाह चलाना मुश्किल होता है तो अपने बच्चों की पढ़ाई के लिए शैक्षिक साधन जुटा नहीं पाते। इनके बच्चों को स्कुली पोशाख, पुस्तके, कापियाँ, पेन, पेन्सिल, स्लेट आदि शैक्षिक साधन नहीं मिलते हैं। ये लोग स्कुली बैंग, पैर में जुती आदि का खर्चा नहीं उठा सकते हैं। इनके बच्चों को अध्ययन के लिए कमरा या रात में लाईट की सुविधा नहीं मिलती। इस प्रकार घुमंतू जनजातियों के बच्चों को शैक्षिक साधन एवं सुविधा से वंचित रहना पड़ता है।

स्कूल में उपेक्षा एवं पीड़ा :-

घुमंतू जनजाति के बच्चे को स्कूल में उपेक्षा एवं पीड़ा झेलनी पड़ती है। 'उठाईगीर' स्वकथन के लेखक को कक्षा के लड़के कंकड़ मारते हैं, 'केंकडे खानेवाला' यह 'उठाईगीर का लक्ष्या' कहकर चिढ़ाते हैं। इस संदर्भ में लेखक 'उठाईगीर' स्वकथन में लिखते हैं कि ''मैं जब भी स्कूल जाता लड़के हंसते। पाथरूट का लक्ष्या आया, ऐसा चिल्लाते। मैं चूपचाप एक किनारे बैठता।''[15] 'पराया' के लेखक पिताजी के कहने पर स्कूल जाते हैं, परंतु मास्टरजी उन्हें स्कूल के बरामदे में बिठाते हैं। वे बरामदे में बैठकर सूनते थे और सारे लड़के कक्षा में बैठते थे। लेखक के पिताजी मास्टरजी को बिनती करते हैं कि बच्चे को कक्षा में बैठने दीजिए। इस पर मास्टरजी झल्लाते हुए कहते हैं कि ''अरे भिखारियों के लिए भी कहीं स्कूल होती है?...अरे उसके पढ़ने के बाद टोकरियां कौन तयार करेगा? यह सब नहीं चलेंगा। बडे आये पढ़ने वालें।''[16] 'डेराडंगर' के लेखक बचपन में पहली बार पढ़ने हेतु स्कूल जाते हैं। स्कूल में मास्टरजी उनपर गुस्सा हो हैं और चिल्लाते हैं। उन्हें कहते हैं कि तू भिखारी का बेटा है, तेरा नाम स्कूल में दाखिल नहीं कर सकते। लेखक को स्कूल से भगा देते हैं। लेखक रोने लगते हैं, तो मास्टरजी उन्हें स्कूल के आँगन में बैठने की इजाजत देते हैं। बाहर बैठकर उन्हें अंदर का कुछ सुनाई नहीं देता था। 'छोरा कोल्हाटी का' स्वकथन के लेखक का नाम स्कूल में 'किशोर शांताबाई काले' लिखा था। लेखक के नाम के आगे पिता के जगह माता का नाम सूनकर स्कूल के बच्चे उनपर हँसते थे। उन्हें चिढ़ाते थे।

'बेरड' स्वकथन के लेखक स्कूल में अच्छी तरह से पढ़ते थे। उन्हें परीक्षा में अच्छे अंक मिलते थे। इससे उनके सहपाठी उनपर जलते थे। वे इन्हें जलील करने तथा मास्टरजी से पीटवाने हेतु षड़यंत्र रचते हैं। एक दिन

मास्टरजी कक्षा में सबको पूछ रहे थे कि 'तू कौन बनेगा?' लड़के जवाब देते कि डॉक्टर, इंजिनिअर, अध्यापक, वकील, पुलिस आदि बनूँगा। लेखक की बारी आने पर कक्षा के लड़के सामूहिक आवाज में कहते हैं कि 'गस्त्या चोर बनेगा! चोर!! 'जीवन सरिता बह रही है' स्वकथन के लेखक पहली बार स्कूल में पढ़ने हेतु जाते है, तो स्कूल के बच्चे 'इसकी माँ की...डवरी का छोरा स्कूल में पढ़ने आया' कहकर उनकी हँसी-मजाक उड़ाते हैं। लेखक अपने सहपाठियों से बातचीत करने, उनमें घुलमिल जाने की कोशिश करते थे, परंतु कक्षा के छात्र उनकी उपेक्षा करते हैं। इस संदर्भ में लेखक 'जीवन सरिता बह रही है' स्वकथन में लिखते हैं कि ''मुझे लगता किसी से तो गप-शप करूँ, किसी से तो बोलने की, बात करने की इच्छा थी, इसलिए मैं दूसरे लड़कों से बोलने की कोशिश करता। लेकिन वे सब सूनकर भी अनसूनी करते। अथवा 'इस डवरी ने क्या माथापच्ची लगाई रखी है' यह सुनाई पड़ता था''[17] लेखक तिसरी, चौथी, पाँचवी कक्षा में लगातार सर्वप्रथम क्रमांक हासिल करते थे। सहपाठियों को यह बर्दाश्त नहीं होता। वे लेखक को हमेशा सताते रहते थे। इस प्रकार घुमंतू जनजातियों के बच्चों को स्कूल में मुख्याध्यापक, मास्टरजी, सहपाठी छात्र आदि पीड़ा पहुँचाते रहते हैं।

घुमंतू जनजातियाँ अस्थिर होने के कारण इनके बच्चे शिक्षा से वंचित रह जाते हैं। इनकी आर्थिक स्थिति दैनीय रहती है, इसलिए इन्हें शैक्षिक साधन प्राप्त नहीं होते। उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि शिक्षा के प्रति अज्ञान एवं अनास्था, स्थैर्यता का अभाव, शैक्षिक सुविधा एवं साधनों का अभाव, स्कूल में उपेक्षा एवं पीड़ा आदि कारणों से घुमंतू जनजातियाँ शिक्षा प्राप्ति से दूर रहीं है। शैक्षिक समस्या के कारण इन जनजातियाँ सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, आदि क्षेत्रों में अपना विकास नहीं कर पायी।

संदर्भ संकेत

1. माने लक्ष्मण, पराया, अनुवाद दामोदर खडसे, साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली, सं. 1993, पृ. 3
2. मोरे दादासाहब, डेराडंगर, अनुवाद डॉ. अर्जुन चव्हाण, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2001, पृ. 17
3. गायकवाड लक्ष्मण, उठाईगीर, अनुवाद सूर्यनारायण रणसुभे, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, सं. 1992, पृ. 20
4. वही, पृ. 40
5. काले किशोर शांताबाई, छोरा कोल्हाटी का, अनुवाद अरुंधती देवस्थले, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 1997 पृ. 15
6. मोरे दादासाहब, डेराडंगर, अनुवाद डॉ. अर्जुन चव्हाण, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2001 पृ. 95
7. गस्ती भीमराव, बेरड, अनुवाद गुलाबराव हाडे, विद्या विहार प्रकाशन, कानपुर, सं. 2006, पृ. 1
8. वही, पृ. 63
9. गायकवाड लक्ष्मण, उठाईगीर, अनुवाद सूर्यनारायण रणसुभे, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, सं. 1992, पृ. 13

10. मोरे दादासाहब, डेराडंगर, अनुवाद डॉ. अर्जुन चव्हाण, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2001 पृ. 108
11. भोसले मच्छीद्र, जीवन सरिता बहत रही है, अनुवाद दत्तात्रय भोसले, द ताईची प्रकाशन, पुणे, सं. 2014, पृ. 14
12. गायकवाड लक्ष्मण, उठाईगीर, अनुवाद सूर्यनारायण रणसुभे, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, सं. 1992, पृ. 32
13. माने लक्ष्मण, पराया, अनुवाद दामोदर खडसे, साहित्य अकादेमी, नयी दिल्ली, सं. 1993, पृ. 5
14. मोरे दादासाहब, डेराडंगर, अनुवाद डॉ. अर्जुन चव्हाण, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2001 पृ. 104
15. गस्ती भीमराव, बेरड, अनुवाद गुलाबराव हाडे, विद्या विहार प्रकाशन, कानपुर, प्र. सं. 2006, पृ. 34
16. गायकवाड लक्ष्मण, उठाईगीर, अनुवाद सूर्यनारायण रणसुभे, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, सं. 1992, पृ. 32
17. गस्ती भीमराव, बेरड, अनुवाद गुलाबराव हाडे, विद्या विहार प्रकाशन, कानपुर, सं. 2006, पृ. 65